ओ३म्

'बौद्ध–जैनमत, स्वामी शंकराचार्य और महर्षि दयानन्द के कार्य'

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

महाभारत काल के बाद देश–विदेश में सर्वत्र अज्ञान फैल गया था। शुद्ध वैदिक धर्म शुद्ध न रह सका और उसमें अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड, कुरीतियां आदि अनेक हानिकारक मत व बातें सम्मिलित हो

गयीं। वेद के अनुसार प्रत्येक मनुष्य को पंच–महायज्ञों का करना अनिवार्य था। जिसमें प्रथम ईश्वरोपासना तथा उसके पश्चात दैनिक अग्निहोत्र का विधान था। इस अग्निहोत्र के विस्तार – गोमेध, अजामेध, अश्वमेध आदि अनेक यज्ञ थे। मध्यकाल में विद्वानों के वेद मन्त्रों के गलत अर्थ व व्याख्याओं से यज्ञों में पशुओं का वध होने लगा और उनके मांस से यज्ञों में आहुतियां दी जाने लगीं। वेदों के अनुसार हमारा समाज गुण, कर्म व स्वभावों के अनुसार चार वर्णों में विभक्त था। महाभारत के पश्चात मध्यकाल में इन वर्णों को गुण–कर्म–स्वभाव के आधार पर न मानकर जन्म पर आधारित माना जाने लगा था। कालान्तर में एक वर्ण में ही अन्म के आधार पर अनेक जातियों की रचना हुई और लोग परस्पर, जो वेदों के अनुसार समान थे, उनमें छोटे–बड़े व ऊंच–नीच का भेदभाव उत्पन्न हो गया। स्त्री व शूद्रों को वेदों के अध्ययन से वंचित कर दिया गया। महाभारत से पूर्व वैदिक काल में सबके लिए अनिवार्य गुरूकुल की शिक्षा व्यवस्था ध्वस्त हो गई। महाभारत के बाद अपवाद स्वरूप ऐसे कम ही उदाहरण होंगे जहां सभी वर्णों के लोग आचार्य से वेदों का अध्ययन कर पाते थे। स्त्रियों की शिक्षा का कोई गुरूकुल या शिक्षा केन्द्र तो सन् 1825 व महर्षि दयानन्द के वेद प्रचार काल में देश व विदेश में कही अस्तित्व में नहीं था। **एक प्रकार से गुरूकुल व्यवस्था का ध्वस्त होना और चार वर्णों में समानता समाप्त होकर विषमता का उत्पन्न होना ही देश की पराधीनता और सभी अन्धविश्वासों व कुरीतियों का कारण था। ऐसे समय में कि जब सामाजिक असामनता चरम पर थी, यज्ञों में हितकारी निर्दोष व मूक पशुओं को मार कर खुलकर हिंसा की जाती थी, उनके मांस से यज्ञ किए जाते थे और मांसाहार किया जाता था, तब भगवान बुद्ध का आविर्भाव हुआ।** उन्होंने पशु हिंसा और सामाजिक असामनता का विरोध किया। उन्हें बताया गया कि पशु हिंसा का विधान वेदों में है। इस पर उनका उत्तर था कि ऐसे वेद जो पशु हिंसा का विधान करते हैं, वह अमान्य हैं। उन्हें बताया गया कि वेदों की रचना तो साक्षात् ईश्वर से हुई है जिसने यह सारा संसार बनाया है, तो इस पर उन्होंने कहा कि मैं ऐसे ईश्वर को भी नहीं मानता। **भगवान बुद्ध पूर्ण अहिंसक व शाकाहारी थे।** पशुओं की हिंसा और हत्या से उनको महर्षि दयानन्द के समान आत्मिक दुःख होता था। वह मानव हितकारी अनेकानेक विषयों के ध्यान व चिन्तन में संलग्न रहते थे। लोगों को उनकी यह बातें पसन्द आई। लोग उनके अनुयायी बनने लगे। उनकी शिष्य मण्डली बढ़ती गई और उनके द्वारा प्रचार से देश व विश्व में उनके अनुयायियों की संख्या बहुत अधिक हो गई। बौद्ध एवं जैन मत ने ईश्वर के अस्तित्व व उसकी उपासना का त्याग कर दिया था। यह सत्य का अपलाप था। ऐसी स्थिति का होना वेदानुयायियों के लिए चिन्ता का विषय बन गया। इसकी एक प्रतिक्रिया यह हुई कि बौद्धों व जैनियों की देखा–देखी वेद मतानुयायियों = आर्यो में भी मूर्ति पूजा का प्रचलन हो गया। एक के बाद एक अन्ध विश्वासों में वृद्धि होती रही और अतीत का वैदिक धर्म कालान्तर में वेदों के विपरीत कुछ वैदिक व कुछ अवैदिक अथवा पौराणिक मान्यताओं का मत बन कर रह गया।

यह सर्व विदित है कि भगवान बुद्ध और जैन मत के प्रवर्तक स्वामी महावीर ईश्वर के अस्तित्व को नहीं मानते थे जिसकी चर्चा हमने उपर्युक्त पंक्तियों में भी की है। उन्होंने–अपनी अपनी कल्पायें की और उसी पर उनका मत स्थिर हुआ। ऐसा होने पर नास्तिकता के बढ़ने व धर्म–अर्थ–काम व मोक्ष के बाधित होने से वैदिक मत के शुभ चिन्तक व उच्च कोटि के ईश्वर भक्त विद्वानों में चिन्ता का वातावरण बन गया। ऐसे समय में एक दिव्य पुरूष स्वामी शंकराचार्य जी का आविर्भाव होता है। वह भारत के दक्षिण प्रदेश में जन्में और उन्होंने अनेक वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन किया जिससे वह अपने समय के सबसे अधिक तार्किक विद्वान तथा वेदान्त, गीता व उपनिषदों के सबसे बड़े विद्वान बने। उन्होंने जब बौद्ध मत व जैन मत के सिद्धान्तों का अध्ययन किया तो उन्हें ईश्वर के अस्तित्व को न मानने का सिद्धान्त असत्य व अनुचित लगा।

सत्य का प्रचार व असत्य का खण्डन ही मनुष्यों का कर्तव्य भी है और धर्म भी। अतः इस धर्म का पालन करने के लिए उन्होंने तैयारी की। उन्होंने इन नास्तिक मतो के खण्डन के लिए अद्वैतवाद की विचारधारा को स्वीकार किया जिसके अनुसार संसार में केवल एक चेतन सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, निराकार तत्व–पदार्थ–सत्ता का ही अस्तित्व है जिसे ईश्वर–परमात्मा आदि नामों से जाना जाता है। उन्होंने कहा कि हमें यह जो संसार दिखाई देता है वह हमारी बुद्धि के भ्रम के कारण दिखाई देता है जबकि उसका यथार्थ या वास्तविक अस्तित्व है ही नहीं। उन्होंने वा उनके अनुयायियों ने इसका एक उदाहरण दिया कि जैसे रात्रि के अन्धेरे में वृक्ष पर लटकी हुई रस्सी सांप प्रतीत होती है, ऐसे ही यह संसार हमें वास्तविक प्रतीत हो रहा है जबकि इसका अस्तित्व है ही नहीं। यह हमारा अज्ञान व भ्रम है। इसी प्रकार से उन्होंने सब प्राणियों को ईश्वर का ही अंश बताया और कहा कि इसका कारण अज्ञान है। अज्ञान जब दूर होगा तो जीव ईश्वर में समाहित होकर उसमें लीन हो जायेगा अर्थात् मिल जायेगा और तब जीव वा जीवात्मा का अस्तित्व नहीं रहेगा।

हमने भगवान बुद्ध व भगवान महावीर के ईश्वर के अस्तित्व को न मानने के सिद्धान्त की चर्चा की है। ऐसा उन्होंने ईश्वर के बनाये या दिये गये ज्ञान वेद व इनके नाम पर हिंसा के व्यवहार के कारण किया था। **हमें लगता है कि इसके लिए यह आवश्यक था कि वेद के नाम पर यज्ञों में जो हिंसा होती थी उसका खण्डन किया जाता और वेदों का शुद्ध स्वरूप प्रस्तुत किया जाता। इसके साथ ही ईश्वर को सृष्टि, समस्त प्राणियों तथा वेद ज्ञान का रचयिता सिद्ध किया जाता। परन्तु ऐसा नहीं किया गया।** यह तो कहा गया कि ईश्वर का अस्तित्व है और उसे तर्कों से सिद्ध किया गया जिससे नास्तिक मत पराभूत हुए, परन्तु वेदों पर पशुओं की हत्या व हिंसा करने जो आरोप थे और जिस हिंसा की प्रेरणा ईश्वर ने वेदों के द्वारा की गई बताई जा रही थी, उनका खण्डन व वेदों के सत्य अर्थों का प्रकाश व उनका मण्डन नहीं किया गया। इस कारण ईश्वर व वेदों पर हिंसा की प्रेरणा करने के आरोप स्वामी शंकराचार्य जी के शास्त्रार्थ के बाद भी यथावत् बने ही रहे। क्या यह नहीं किया जाना था या इसकी कोई आवश्यकता नहीं थी? हमें लगता है कि यह कार्य अवश्य किया जाना चाहिये था परन्तु स्वामी शंकराचार्य जी के अल्पकालिक जीवन व अन्य अनेक कारणों से सम्भवतः वह ऐसा नहीं कर सके थे। हमने इसके लिए अपने एक मित्र के साथ स्वामी शंकराचार्य जी के अनुयायी, एक उपदेशक विद्वान से भी चर्चा की। इससे हमें यह ज्ञात हुआ कि स्वामी शंकराचार्य जी ने यज्ञ में हिंसा उचित है या अनुचित, इस भीष्म प्रश्न पर ध्यान नहीं दिया अर्थात् इसकी उपेक्षा की। **इसका परिणाम यह हुआ कि यज्ञों के सत्य स्वरूप, उनका पूर्णतः अंहिंसात्मक होना, का प्रचार न हो सका और जो चल रहा था वह प्रायः चलता रहा या कुछ कम हुआ।** इसी कारण वेदों का महत्व भी स्थापित न हो सका और उनका संरक्षण व रक्षा न हो सकी। **स्वामी दयानन्द के जीवनकाल सन् 1825–1883 तक आते–आते देश में वेदों की उपलब्धि प्रायः विलुप्ति व अप्राप्यता की सी हो गई थी जिसकी खोज महर्षि दयषनन्द ने अपने अद्भुत ब्रह्मचर्य के तप, विद्या व पुरूषार्थ से की। यदि वह, वह न करते जो उन्होंने किया, तो हमें लगता है कि वेद सदा–सर्वदा के लिए विलुप्त व अप्राप्य हो जाते। आज हमें वेद व उनके मन्त्रों के सत्य अर्थ उपलब्ध हैं, वह महर्षि दयानन्द के तप व पुरूषार्थ का परिणाम है और इसका पूर्ण श्रेय उन्हीं को है। मानव जाति के लिए यह कार्य इतना हितकारी हुआ है कि जिसकी प्रंशसा के लिए हमारे पास शब्द नहीं हैं। यदि वह यह कार्य न करते तो, ऐसी अवस्था में, सब मत–मतान्तरों की मनमानी चलती रहती।** उनके द्वारा वेदों की प्रमाणिक पाण्डुलिपियों की खोज, उनके पुनरूद्धार व सत्य व यथार्थ वेदार्थ अथवा वेद भाष्य से लोगों को ईश्वर के सत्य स्वरूप का ज्ञान हुआ और साथ ही जीवात्मा, कारण प्रकृति व कार्य प्रकृति के भेद व अन्तर का पता भी चला। **महर्षि दयानन्द प्रदत्त यह त्रैतवाद का सिद्धान्त ही वास्तविक, यथार्थ, सत्य व निर्भ्रान्त सिद्धान्त है।** महर्षि दयानन्द द्वारा किए गये वेदों के भाष्य, वैदिक रहस्यों के उद्घाटन व सिद्धान्तों एवं मान्यताओं के प्रकाशन से सभी मत–मतान्तरों में मिश्रित असत्य, अज्ञान व मिथ्या मान्यताओं व सिद्धान्तों का ज्ञान समाज में उद्घाटित हुआ। **हम समझते हैं कि यह महर्षि दयानन्द की संसार को बहुमूल्य व दुर्लभ देन है। इसके लिए महर्षि दयानन्द विश्व समुदाय की ओर से अभिनन्दनीय है।**

इस लेख में हम यह कहना चाहते हैं कि स्वामी शंकराचार्य जी ने नास्तिकता का खण्डन किया और ईश्वर के अस्तित्व व स्वरूप का अपनी विचारधारा के आधार पर मण्डन किया। देश, काल व परिस्थितियों के अनुरूप उनका यह कार्य बहुत सराहनीय था। इसके अतिरिक्त ईश्वर व वेदों पर पशु हत्या की प्रेरणा देने और पशु के मांस से यज्ञ करने का जो मिथ्या दोष, यज्ञकर्ताओं के मिथ्याज्ञान व स्वेच्छाचारिता के कारण, लगा था, उसका परिमार्जन स्वामीजी शंकराचार्य जी ने नहीं किया। सम्भवतः इसी कारण वेदों का समुचित संरक्षण भी उनके व बाद के समय में नहीं हो सका। वेदों पर लगाये गये वेदेतर मतावलम्बियों के मिथ्या अनेक दोषों का खण्डन, वेदों के सत्य अर्थों का प्रकाशन व वेदों के ईश्वर से उत्पन्न, हल काल में इनके प्रासंगिक, उपयोगी व अपरिहार्य होने का मण्डन महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने जीवन काल में किया जिसके लिए वह सर्वतोभावेन प्रंशसा व अभिनन्दन के पात्र हैं। उन्होंने न केवल वेदों का पुनरूद्धार ही किया अपितु वेद मन्त्रों के सत्य अर्थों को प्रकाशित कर हमें प्रदान किया। उन्होंने विश्व के सभी मनुष्यों को उनके वेदार्थों की परीक्षा करने की व्याकरण की आर्ष प्रणाली, अष्टाध्यायी–महाभाष्य–निरूक्त पद्धति भी हमें प्रदान की है, जिसके लिए सारी मानवजाति इस सृष्टि के प्रलय होने तक उनकी कृतज्ञ रहेगी। आज यदि स्वामी शंकराचार्य जी होते तो वह निष्पक्ष व न्याय के पक्षधर होने के कारण महर्षि दयानन्द के कार्यों के सबसे बड़े प्रशंसक होते। इन्हीं शब्दों के साथ हम इस लेख को विराम देते हैं।

–मनमोहन कुमार आर्य
पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोनः 09412985121

''वेदज्ञ आचार्य पं. रामनाथ वेदालंकार जी के जन्म शताब्दी समारोह का आयोजन ज्वालापुर, हरिद्वार, उ.प्र. में रविवार 2 नवम्बर, 2014 को''

महर्षि दयानन्द की वेदार्थ शैली को सर्वांगपूर्ण अपनाने वाले वेदज्ञ आचार्य पं. डा. रामनाथ वेदालंकार जी का जन्म शताब्दी समारोह आगामी रविवार 2 नवम्बर, 2014 को हरिद्वार में आयोजित किया जा रहा है। आचार्य जी ने गुरूकुल कांगड़ी में शिक्षा प्राप्त की और इसी संस्था में वेदाचार्य व अनेक पदों पर रहकर सेवा की। यहीं रहते हुए आपने वेदों पर अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थों का प्रणयन भी किया। गुरूकुल कांगड़ी से सेवा निवृति के बाद आप पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ की **'दयानन्द अनुष्ठान पीठ'** के अध्यक्ष रहे और यहां रहकर आपने तीन प्रमुख अनुसंधानपूर्ण ग्रन्थों का प्रणयन किया। इसके अतिरिक्त आपने सामवेद भाष्य सहित वेदों पर अनेक मौलिक ग्रन्थों का प्रणयन किया। वेदों के मूर्धन्य विद्वान होने के कारण भारत के राष्ट्रपति द्वारा आपको सम्मानित भी किया गया। आयोजन के संयोजक डा. विनोदचन्द्र विद्यालंकार की ओर से आर्य जनता से इस समारोह में सपरिवार एवं इष्ट–मित्रों सहित पधारने का अनुरोध किया गया है। इच्छुक महानुभाव आयोजन में सम्मलित होने के लिए कृपया **आयोजन समिति के संयोजक डा. विनोदचन्द्र विद्यालंकार जी** से उनके मोबाइल नम्बर 09897509561 / 09758130593 पर सम्पर्क करें। **–मनमोहन आर्य**